REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514
VOLUME - 8 | ISSUE - 9 | JUNE - 2019

भारत में गठबंधन की राजनीति का संक्षिप्त विवरण

Dr. Prem Kumar Nishad
Higher Secondary Teacher (History), +2 Raj High School Darbhaga.

प्रस्तावना :

गठबंधन की सरकार का चलन कोई नया नहीं है। भारत में सर्वप्रथम 1946 ई. में पंडित जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में अन्तरिम सरकार का गठन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, हिन्दू महासभा एवं मुस्लिम लीग को मिलाकर हुआ था। कहीं भी, संसदीय लोकतांत्रिक देश में गठबंधन की सरकार का गठन हो सकता है। पश्चिमी देशों में गठबंधन की सरकार वहॉ की आम विशेषता हो गई है और एकल पार्टी की बहुमत वाली सरकार अब एक अपवाद जैसा हो गया है। भारत में केरल एवं पश्चिमी बंगाल को गठबंधन की राजनीति का गृहराज्य माना जाता है।

आजादी के बाद भारत में गठबंधन की राजनीति का उदय वर्ष 1967–68 के गैर कांग्रेसवाद के ज्वार में हुआ था। इस मुहिम का सूत्रपात डॉ राम मनोहर लोहिया ने किया था, पर इसकी परिणति उनके देहांत के बाद देखने को मिली। अब तक इस बारे में लगभग सभी विद्वान एकमत हो चुके हैं कि भारत में अब लंबें समय तक कोई एक राजनीतिक दल अपने बलबूते पर केन्द्र में सरकार बनाने में समर्थ नहीं हो पाएगा और गठबंधन वाली साझा सरकारों के इस युग में हमें अभी बरसों रहना होगा, इसका अर्थ यह है कि कोई एक विचारधारा या व्यक्ति की मर्जी दूसरों पर नहीं थोपी जा सकती और सरकार की कार्यसूची न्यूनतम साझा कार्यक्रम के आधार पर ही तय हो सकती है, लेकिन ऐसे राजनीतिक माहौल में अवसरवांद की फसल खूब बोयी और काटी जाएगी।

आज देश की राजनीति पूरी तरह से गठबंधन पर आधारित है। भारतीय राजनीति की अब यह एक विशेषता भी बन गयी है। पिछले कई वर्षों से यह राजनीति का एक ऐसा कारक बन गया है, जो किसी भी सत्त पक्ष और विपक्ष के लिए चिंता का विषय है। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो यह जोड़–तोड़ की राजनीति के द्वारा खोलता है। इस जोड़–तोड़ की राजनीति का लक्ष्य कुछ नहीं होता है, होता है तो मात्र सत्ता। झारखंड के संदर्भ में देखें तो पूर्व में गठबंधन की राजनीति का जो विचित्र समीकरण बन कर उभरा था, उसने हमें यह मानने को मजबूर कर दिया है कि अब विचारधारा का दुखद निधन हो गया है। गठबंधन सरकार बनाने में विचारधारा कोई बहुत ज्यादा मायने नहीं रखती है। साथ ही झारखंड के हालात देख कर कह सकते हैं कि गठबंधन में मौजूदा हालात में कोई भी सरकार दावे के साथ नहीं कह सकती कि वह पॉच वर्ष तक कायम रहेगी। हालांकि वह बात अलग है कि कभी–कभी गठबंधन की मजबूरियों के साथ सरकार अपना कार्यकाल पूरा कर लेती है। आज राष्ट्रीय स्तर पर गठबंधन राजनीति का जो वीभत्स रूप इस समय हमारे देश में दिख रहा है, वह भयभीत करने वाला है। गठजोड़ सरकार चलाने की पीड़ा को प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से बेहतर कौन महसूस कर सकता है। लेकिन इससे पहले कि देर हो जाये गठबंधन की एकजुटता को कायम रखने के उपाय तलाशने होंगे, इसके लिए कुछ

कानूनी प्रावधान भी करने पड़ेगे। इसका एक रास्ता दलबदल विरोधी कानून में संशोधन हो सकता है।

चुनाव आयोग ने राजनीतिक दलबदल की समस्या का विश्लेषण कर कुछ महत्वपूर्ण सुझाव सामने रखे हैं। दलबदल विरोधी कानून जो 1986 में लागू हुआ और 2004 में इसमें संशोधन किया गया, कि पड़ताल के बाद आयोग ने कहा था कि राजनीतिक दलों से व्यक्तियों के दलबदल को रोकना ही पर्याप्त नहीं है। अब नये हालात के मुताबिक कानून में संशोधन की जरूरत महसूस की जा रही है, ताकि राजनीतिक दलों के गठबंधन बदलने पर रोक लगायी जा सकें। चूँकि देश गठबंधन युग में है इसलिए स्थिर सरकार के गठन के लिए गठबंधन की एक जुटता कायम रखने की आवश्यकता है।

दूसरे प्रशासनिक सुधार आयोग के अनुसार, जब पार्टियां गठबंधन धर्म निभाने से इनकार कर देती हैं तो गठबंधन सरकार की नीति कमजोर पड़ती है। अगर राजनीतिक दल अवसरवाद से प्रेरित होकर सत्ता हासिल करने के लिए साझा न्यूनतम कार्यक्रमों को किनारा कर लेते हैं तो इससे गठबंधन सरकार मुसीबत में पड़ती है। आयोग का कहना है कि गठबंधन को लेकर अवसरवादी राजनीति को कानून से प्रतिबंधित करना चाहिए। इस प्रावधान को दलबदल विरोधी कानून में संशोधन के माध्यम से लागू किया जा सकता है। यह प्रस्ताव दलबदल विरोधी कानून को और आगे ले जाता है, क्योंकि यह किसी दल द्वारा गठबंधन बदलने की स्थिति में सरकार की अस्थिरता की समस्या का समाधान करता है। अगर कोई दल गठबंधन को बीच में छोड़ दे तो उसके सदस्यों को दोबारा जनादेश हासिल करना चाहिए। झारखंड का उदाहरण हमारे सामने है। इस स्थिति से सीख ले कर इस कानून को लागू करना चाहिए, क्योंकि बीच में गठबंधन तोड़ने के राजनीतिक दलों के विचत्र व्यवहार से प्रमुख गठबंधनों की एकजुटता खतरे में पड़ जाती है। अगर आज यह कानून लागू होता तो झारखंड में पूर्व के सरकार के भविष्य पर तलवार लटकाने में किसी को कामयाबी नहीं मिलती। इस कानून में तमाम राजनीतिक गठबंधनों के लिए न्यूनतम पांच वर्ष की अवधि रखी जानी चाहिए। इस प्रकार गठबंधन युग में भी सरकारों की स्थिरता बरकरार रखी जा सकती है। इस आयोग की रिपोर्ट पर इसलिए भी तुरंत ध्यान दिया जाना चाहिए क्योंकि लोकतंत्र लगातार विखंडित हो रहा है और राष्ट्रीय दलों का तेजी से ह्रास हो रहा है। अगर लोग अधिक से अधिक दलों को चुनेंगे तो गठबंधनों में जोड़–तोड़ सामान्य मानदंड बन जायेगा, जिससे सरकार चलाने में हमेशा परेशानी खड़ी होती रहेगी, लिहाजा लठबंधन की एकजुटता को सुरक्षित रखना समय की आवश्यकता है।

कांग्रेस में विभाजन :– आजादी के बाद से तीन लोकसभा तक कांग्रेस पार्टी के लिए सब कुछ सही रहा देश के पहले तीनों आम चुनाव कांग्रेस पार्टी ने जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में लड़े और इसमें पार्टी सफल भी रही। वर्ष 1964 में नेहरू की मृत्यु के बाद कांग्रेस में उनके जितने कद का और कोई नेता नहीं था। दूसरी पंक्ति ने नेताओं में सबसे पहले लाल बहादुर शास्त्री थे। 1966 में उनकी मृत्यु के बाद पार्टी ने मोरारजी देसाई के ऊपर इंदिरा गांधी को तवज्जो दी।

वर्चस्व को चुनौती :– 1967 में कांग्रेस के वर्चस्व को पहली चुनौती मिली। इस वर्ष विपक्ष संयुक्त विधायक दल के बैनर तले एकजुट हो गया और कई हिंदीभाषी राज्यों में कांग्रेस की हार हुई। तब पार्टी के अंदर इंदिरा गांधी की क्षमता पर सवाल उठे। इसके बाद कांग्रेस दो फाड़ हो गई। के कामराज के नेतृत्व वाले धड़े को कांग्रेस (ओ) या पुरानी कांग्रेस कहा गया। चुनाव आयोग ने इंदिरा की अगुवाई वाले दल को ही असली कांग्रेस पार्टी का दर्जा दिया।

फिर हुआ विभाजन :– वर्ष 1969 में राष्ट्रपति जाकिर हुसैन की मृत्यु के बाद कांग्रेस ने तत्कालीन उप राष्ट्रपति नीलम संजीव रेड्डी को राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार बना दिया। दूसरी ओर वीवी गिरि का समर्थन किया और रेड्डी चुनाव हार गए। इसके बाद कांग्रेस टूटी। इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाले धड़े को आईएनसी (आर) कहा गया और उनकी सरकार पर पकड़ कायम रही।

चुनाव अवैध ठहराया :– 1971 में 'गरीबी हटाओं' के नारे के साथ इंदिरा सत्ता पर काबिज हुई। 1975 में इंदिरा की लोकसभा चुनाव में जीत को कोर्ट ने अवैध ठहराया जिसके बाद देश में आंदोलन शुरू हुआ। इसके बाद इंदिरा ने आपातकाल की घोषणा कर दी। 1977 में जब देश में चुनाव हुए तो इंदिरा के नेतृत्व वाला दल कांग्रेस (आई) के नाम से चुनाव में उतरा।

सोनिया के समय बटी कांग्रेस :– 1998 में सोनिया गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने चुनाव लड़ा, लेकिन चुनाव परिणम आने के बाद एक धड़ा सोनिया के विदेशी मूल को मुद्दा बनाते हुए पार्टी से अलग हो गया। इसमें शरद पवार, पीए संगमा और तारिक अनवर प्रमुख थे। इन्होंने राष्ट्रवादी कांग्रेस पार्टी (एनसीपी) बनाई।

जनता पार्टी :– जनता पार्टी कई पार्टियों का समूह था, जो 1975 से 1977 के बीच देश में लगाए गए आपातकाल के खिलाफ थीं। इस पार्टी ने 1977 में हुए आम चुनाव में कांग्रेस (आर) को हरा कर देश में पहली गैर कांग्रेसी सरकार बनाई थी।

कांग्रेस के खिलाफः– 1971 के आम चुनाव में जीत दर्ज करने बाद कांग्रेस ने इंदिरा गांधी के नेतृत्व में सरकार बनाई, लेकिन इस सरकार के कार्यकाल में भ्रष्टाचार और महंगाई चरम पर पहुंच गई। जनता में इससे तो गुस्सा थी ही, 1975 में कोर्ट के इंदिरा के लोगसभा चुनाव को अवैध ठहराने से गुस्सा चरम पर पहुंचा। अपनी सरकार खतरे में देख इंदिरा ने देश में आपातकाल की घोषणा कर दी और विपक्ष के सभी बड़े नेताओं को जेल जाना पड़ा। आपातकाल खत्म 1977 की जनता सरकार के केंद्रीत भूमिका में थे मोरारजी देसाई। आपातकाल के बाद आम चुनाव की घोषणा हुई। इस चुनाव में भाग लेने के लिए कई विपक्षी पार्टियों कांग्रेस (ओ) से अलग हुए नेता जनता पार्टी से जुड़े। इस चुनाव में राजनारायण ने इंदिरा गांधी को रायबरेली में हराया।

जनता पार्टी की सरकार :– कांग्रेस की ऐतिहासिक हार के बाद जनता पार्टी ने सरकार बनाई और मोरारजी देसाई देश के प्रधानमंत्री बने। 1979 के मध्य में मोरारजी देसाई को प्रधानमंत्री पद से इस्तीफा देना पड़ा। इस दौरान अटल बिहारी वाजपेयी और लालकृष्ण आडवाणी जनता पार्टी से अलग हो गए थे। इसके बाद जनता पार्टी से अलग हुए भारतीय जनता दल के नेता चौधरी चरण सिंह देश के अगले प्रधानमंत्री बने। सिंह की सरकार अल्पमत की थी और कांग्रेस का समर्थन प्राप्त था। विश्वास मत हासिल करने से पहले ही कांग्रेस ने समर्थन वापस ले लिया। 1980 और 1984 के लोकसभा चुनाव में जनता पार्टी समाजवादी नेता चंद्रशेखर के नेतृत्व में अपनी उपस्थिति दर्ज कराती रही।

नेशनल फ्रंट :– 1987 में जब वीपी सिंह को रक्षा मंत्री के पद से हटा दिया तो उन्होंने जन मोर्चा बनाया। जन मोर्चा में अरूण नेहरू, आरिफ मोहम्मद खान और मुती मोहम्मद सईद भी थे। जन मोर्चा राजीव गांधी सरकार में हुए भ्रष्टाचार के खिलाफ मोर्चा खोले हुए था। 1989 के चुनाव से पहले जन मोर्चा, जनता पार्टी, लोकदल और कांग्रेस (एस) को एक साथ मिला कर जनता दल बना। इसके बाद वीपी सिंह ने कुछ वाम और दक्षिणपंथी पार्टियों के साथ मिल कर नेशनल फ्रंट बनाया और उनकी अगुवाई में सरकार बनी। वीपी सिंह की अगुवाई में नेशनल फ्रंट की सरकार बनी।

चौंकाने वाली नतीजे :– 1989 के चुनाव के परिणाम काफी चौकाने वाली थे। कांग्रेस को 197 सीटें मिलीं जो पिछले चुनाव के मुकाबले आधे से भी कम थी। जनता दल (143) दूसरे नंबर पर था। भाजपा की सीटें 85 तक आ पहुंची थी। वाम दलों के 45 सांसद थे। राजीव गांधी के सरकार बनाने से मना करने पर वीपी सिंह के नेतृत्व में नेशनल पंट की सरकार वाप दल और भाजपा के सहयोग से बनी। 1990 में मंडल आयोग की सिफारिशों को लागू करने के बाद भाजपा के समर्थन वापस लेने की वजह से गिर गई।

तीसरा मोर्चा :– 1996 के चुनाव के बाद न कांग्रेस और न ही भाजपा को पूर्ण बहुमत मिला था। अटल बिहारी वाजपेयी 13 दिन सरकार चला कर इस्तीफा दे चुके थे। इसके बाद 13 पार्टियों ने मिल कर यूनाइटेड फ्रंट बनाया। इस फ्रंट ने 1996 से 1998 तक दो सरकारें बनाई। इन सरकारों में एचडी देवगौड़ा (1 जून 1996 से 21 अप्रैल 1997) और आईके गुजराज (21 अप्रैल 1997 से 18 मार्च 1998) प्रधानमंत्री बने। इस सरकारों को कांग्रेस और टीपीडी बाहर से समर्थन दे रहे थे। दोनों बार कांग्रेस ने सरकार से समर्थन वापस लिया।

एनडीए (राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन) :– 1998 के चुनाव से पहले एनडीए बना। इस गठबंधन में 13 पार्टियां शामिल थीं। 1998 के चुनाव के बाद अटल बिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री बने, लेकिन एआईएडीएम के एनडीए के समर्थन वापसी से सरकार 13 महीने में ही चली। 1999 के चुनाव में एनडीए को पूर्ण बहुमत मिला। अटल प्रधानमंत्री बने।

यूपीए (संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन) :– 2004 के चुनाव के बाद सरकार बनाने के लिए यूपीए का गठन हुआ। कुल मिला कर यूपीए की 222 सीटें थीं। इसके बाद यूपीए की सरकार को वामदलों और समाजवादी पार्टी का बाहर से समर्थन मिल गया। यूपीए की ओर से देश के प्रधानमंत्री बने मनमोहन सिंह। 2008 में यूपीए

सरकार से वामदलों से गठजोड़ राजनीति की मजबूरी थी। मौजूदा राजनीतिक परिस्थिति में गठबंधन का कोई विकल्प नहीं है, किंतु यह राजनीतिक मलियारे की मजबूती है या मजबूरी, इस पर राजनीतिक विशेषज्ञों की राय बंटी हुई है। वरिष्ठ राजनीतिक स्तंभकार नीना व्यास से प्रवीण प्रभाकर की बातचीत :–

मौजूदा भारतीय राजनीति में गठबंधन मजबूती का नाम है या मजबूरी का ?

मजबूती बन सकती थी, पर बन गई है मजबूरी, क्योंकि विचारों का गठबंधन नहीं, बल्कि सत्ता का गठबंधन होता आया है। पहले के समय में यदि सरकार अच्छा करती थी, तो इसका सारा श्रेय एक पार्टी को जाता था, लेकिन गठबंधन के बाद अच्छे कामों की शाबाशी किसी एक पार्टी को मिलती है और गलतियों का भुगतान सब को करना पड़ता है। आसान हो गया है कि काम नही हो तो ठीकरा गठबंधन पर फोड़ दो। एनडीए और पूपीए में हमने यह देखा है। अगर इसे जमबूती की तरह लिया जाता, तो पूरे देश का वास्तविक प्रतिनिधित्व होता।

ऐसा क्यों नहीं हुआ, इसका कोई राजनीतिक कारण ?

दरअसल, राज्य की राजनीति केंद्र पर हावी हो गई। जो गठबंधन की छोटी पार्टियां होती हैं, वे राज्य को अधिक अहमियत देती हैं। इससे केन्द्र पर अनावश्यक दबाव बनता है। मौजूदा समय में तमिलनाडु में श्रीलंका की राजनीति चल रही है, जबकि यह विदेशी मुद्दा है और इस मामले में किसी भी निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले केंद्र सरकार और भारत की संप्रभुता को आगे रखना चाहिए। 20 साल पहले के गठबंधन में राज्यों की राजनीति उतनी हावी नहीं थी, लेकिन अब यह अधिक है। इसलिए राजनीतिक अस्थिरता और राजनीतिक फैसलों में दूरी बढ़ी है।

ऐसे में, आम चुनाव में देश की जनता एक पार्टी को क्यों वोट नहीं देती ? जनता के सामने स्थानीय मुद्दे बड़े हैं। वे रक्षा, विदेश और वित्तीय घाटे से अधिक बिजली–पानी–सड़क और महंगाई जैसे मसले पर सोचते हैं।

REFERENCE:-

- Karunakaran K.P.ed., Coalition Government in India, Simal I As, 1975.
- Subhash kashyap. C., The Politics of Defections-A study of state politics in India, Delhi, 1969.
- Rajni Kothari, Politics in Indian, New Delhi, 1970.
- Sukdev Nanda, Coalition Politics in Orissa, New Delhi, Sterling Publishers, 1979.
- Iqbal Narain Twilight ow Dawn, The Political change in india, 1967-1971 (Agra, 1972)
- Sahni, N.C. ed, Coalition Politics in India, Tullunder 1971.
- Jawarharlal Panday, State Politics in India. New Delhi, 1982.
- Iqbal Narain, ed, State Politics in India, Meerut, 1976.
- E.M.S. namboodiripad, Kerala Society and Politics, New Delhi, 1984.
- Thomas E.J., Coalition Came Politics In Kerala after Independence New Delhi, 1985.
- John P. John, Coalition Governments in Kerala 1957-70, Trivandrum. 1981.
- Krishnamurthy K.G. and Lakshmana Rao. G., Political Preferences in Kerala, New Delhi, 1968.
- Prabhat Khabar 13 January 2013.
- Prabhat Khabar 26 January 2014.